भारतीय समाज में वर्ण- व्यवस्था : एक समीक्षात्मक अध्ययन

डॉ० सुरेंद्र सिंह*

एसोसिएट प्रोफेसर-दर्शनशास्त्र

शहीद उधमसिंह राजकीय महाविद्यालय,

मटक माजरी, इंद्री, करनाल, (हरियाणा)

Email ID: ssurendersingh2003@gmail.com

Accepted: 07.02.2023 **Published**: 01.03.2023

मुख्य-शब्द :- वर्ण, कर्म, आदर्श सामाजिक व्यवस्था, योग्यता।

शोध-आलेख : सार

वर्ण-व्यवस्था का भारतीय समाज में एक विशेष स्थान था। यह प्राचीन भारतीय आदर्श समाज का मूल आधार रही है। वर्ण-व्यवस्था के अन्तर्गत भारतीय ऋषियों ने मानवीय समाज को मानवीय गुणों व कर्मों के आधार पर चार वर्णों में विभाजित किया। इन चार वर्णों को ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र के नाम से जाना जाता था। विभिन्न धर्म ग्रन्थों का अध्ययन करने पर इस बात की पुष्टि होती है कि वर्ण- व्यवस्था का आधार जन्म को न मानकर गुण व धर्म को माना गया। मनुष्य जन्म लेने के पश्चात् अपने कर्मों के आधार पर उत्कर्ष या अपकर्ष को प्राप्त करता है अर्थात कर्मों के आधार पर ब्राह्मण-शूद्र और शूद्र-ब्राह्मण, बन सकता था। अतः वर्ण व्यवस्था का उद्देश्य सामाजिक कल्याण को ध्यान में रखते हुए और प्रत्येक व्यक्ति की योग्यता के अनुसार उसका कार्य निर्धारित करते हुए उसे कर्त्तव्य पालन के लिए प्रेरित करना था।

Paper Identification

**Corresponding Author*

© IJRTS Takshila Foundation, डॉ० सुरेंद्र सिंह, All Rights Reserved.

विस्तार:

वर्ण-व्यवस्था प्राचीन भारतीय समाज का मूल आधार थी। भारतीय ऋषियों के द्वारा एक ऐसी आदर्श सामाजिक व्यवस्था का निर्माण किया गया जिसमें व्यक्ति और समाज दोनों की उन्नति निहीत थी| इस आदर्श सामाजिक व्यवस्था को ही वर्ण व्यवस्था का नाम दिया गया| इस वर्ण व्यवस्था के आधार पर ही समाज को विभिन्न वर्गों में विभाजित किया गया।केवल भारत ही नहीं वरन् भारत से बाहर भी प्राचीन समय से ही अनेक देशों विभिन्न आधारों पर समाज को अनेक वर्गों में विभाजित करने का कार्य किया। यह विभाजन कहीं व्यवसाय के आधार पर, कहीं धन के आधार पर और समान हितों के आधार पर किया गया । अगर ऐतिहासिक दृष्टिकोण से देखा जाए तो प्राचीन समय में चीन का समाज चार वर्गों- शिक्षित वर्ग, किसान वर्ग, शिल्पी वर्ग, और व्यापारी वर्ग में विभाजित था। यूरोपिय देशों में भी सम्पति के आधार पर समाज अनेक वर्गों में बंटा हुआ था। इस प्रकार किंग्सले डेविस के मतानुसार 'समाज, सामाजिक कार्यों को सुचारू रूप से चलाने के लिए व्यक्तियों को उनकी योग्यता के आधार पर विभिन्न वर्गों में बांटने कार्य करता है।"[1] इसी प्रकार प्राचीन भारतीय विचारकों ने भी मानवीय योग्यताओं अर्थात् गुणों के आधार पर समाज को विभिन्न वर्णों में विभाजित करने का कार्य किया|

भारतीय पृष्ठभूमि में 'वर्ण' शब्द की उत्पत्ति, 'वृ' धातु से हुई मानी गई है। 'वृ' शब्द का अर्थ है ' वरण करना या 'चुनना' । व्यक्ति अपने गुणों के आधार पर जिस व्यवसाय को चुनता है वही वर्ण कहलाता है। भारतीय समाज में ऋग्वेद में मुख्य रूप से दो वर्णों- आर्य वर्ण और दास वर्ण का उल्लेख मिलता है। लेकिन इन वर्णों का मूल सम्बन्ध रंग से था। आर्य वर्ण के लिए गोरे रंग का और दास वर्ण के लिए काले रंग का प्रयोग किया गया।[2] सेनार्ट महोदय के अनुसार आर्य और दासों के रंग को व्यक्त करने वाला वर्ण शब्द धीरे-धीरे समाज में चार वर्णों को व्यक्त करने लगा।[3] जे० एच० हट्टन के अनुसार उन चार वर्णों के लिए चार रंग भी निर्धारित किए गए- ब्राह्मण के लिए सफेद, क्षत्रिय, के लिए लाल, वैश्य के लिए पीला और शूद्र के लिए काला|[4] इससे स्पष्ट है कि प्रारम्भ में वर्ण का मूल सम्बन्ध रंग से था, लेकिन बाद में धीरे धीरे वर्ण शब्द का प्रयोग गुण व कर्म के आधार पर एक निश्चित व्यवस्था का बोध करवाने के लिए चार वर्णों- ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र के रूप में किया गया, जिसका प्रमाण हमें गीता में भी मिलता है। गीता में, श्री कृष्ण ने कहा है कि -" मैंने ही, चार वर्णों की सृष्टि गुण व कर्म के आधार पर की है|"[5] अतः गुण व कर्म

के आधार पर सामाजिक व्यवस्था को सुचारू रूप से चलाने के लिए कार्य विभाजन के रूप में वर्ण व्यवस्था की उत्पत्ति हुई|

भारतीय समाज में वेदों को सबसे प्राचीन माना, गया है, जिन्हें अपौरूषेय, भी कहा जाता है। ये वेद चार हैं-ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद, और अथर्वेद । इनमें ऋग्वेद सबसे प्राचीन है| ऋग्वेद के पुरुष सूक्त में एक विराट पुरुष की कल्पना की गई है | इसी पुरुष से वर्णों की उत्पत्ति मानी गई है कि सृष्टि के आरम्भ में विराट पुरुष के मुख से ब्राह्मण, भुजाओं से क्षत्रिय, जंघा से वैश्य और पैरों से शूद्र की उत्पत्ति हुई।[6] मुख बोलने का कार्य करता है, इसलिए ब्राह्मण का कार्य पढ़ना और पढ़ाना था, भुजाएँ शक्ति की प्रतीक हैं इसलिए क्षत्रियों का कार्य समाज की रक्षा करना था| जंघा बलिष्ठता की सूचक हैं इसलिए वैश्य का कार्य कृषि व आर्थिक उत्पादन करना था, पैरों का कार्य शरीर के वजन को सहन करते हुए ऊपर बताए गए तीनों अंगों का सहयोग करना है, इसलिए शूद्र का कार्य तीनों वर्णों की सेवा के रूप में समाज का सहयोग करना था। इस प्रकार, समाज में इन चारों वर्णों का वही महत्व है जो शरीर में मुख, भुजाओं, जंघा और पैरों का महत्व है| महाभारत के शान्ति पर्व में भी वर्णों की उत्पत्ति के सम्बन्ध में लिखा है कि ब्रह्मा के मुख से ब्राह्मणों की उत्पत्ति हुई, भुजाओं से क्षत्रियों की, जंघा से वैश्यों की और ब्रह्मा के चरणों से शूद्रों की उत्पत्ति हुई| इस प्रकार ब्रह्मा ने पृथ्वी पर ब्राह्मणों की उत्पत्ति धर्म रक्षा के लिए, क्षत्रियों की उत्पत्ति प्रजा की रक्षा के लिए, वैश्यों की उत्पत्ति कृषि व व्यापार के लिए और शूद्रों की उत्पत्ति तीनों वर्णों की सेवा करने के लिए की|[7]

साधारणतय: वेद, महाभारत, और गीता इत्यादि धर्म ग्रंथों के अध्ययन से इस बात की पुष्टि होती है कि वर्ण-व्यवस्था का आधार जन्म न होकर गुण व कर्म को माना गया। जिस प्रकार परशुराम का जन्म ब्राह्मण परिवार में हुआ लेकिन कर्म के कारण वह क्षत्रिय कहलाया। इसी संबंध में महाभारत के अनुशासन पर्व में कहा गया है कि यदि शूद्र भी सदाचारी हो जाए तो वह भी ब्राह्मण बन सकता है।"[8] शुक्राचार्य ने भी वर्ण का आधार कर्म को माना है। शुक्राचार्य के अनुसार जन्म से कोई ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य एवं शूद्र नहीं होता, बल्कि गुण और कर्म से ही अलग-अलग वर्ण होते हैं|[9] मनुस्मृति में भी कहा गया है कि

मनुष्य जन्म लेने के बाद कर्मों के आधार पर उत्कर्ष या अपकर्ष को प्राप्त कर लेता है अर्थात ब्राह्मण-शूद्र और शूद्र- ब्राह्मण हो जाते हैं।"[10]

इस प्रकार विभिन्न धर्म ग्रन्थों का अध्ययन करने से यह स्पष्ट हो जाता है कि वर्ण-व्यवस्था गुण व कर्म पर ही आधारित थी, इसलिए उस समय वर्ण परिवर्तन करना सम्भव था। इसीलिए विश्वामित्र, परशुराम और वाल्मीकि द्वारा गुण और कर्म के आधार पर अपना-अपना वर्ण परिवर्तित किया गया। समाज में प्रत्येक व्यक्ति कर्म के आधार पर अपने- अपने कर्तव्यों का पालन करते हुए जीवन में प्रगतिशील था| लेकिन धीरे-धीरे कालान्तर में वर्ण-व्यवस्था में आनुवांशिक व्यवसाय, का महत्व बढ़ने लगा, जिसके कारण वर्ण-व्यवस्था में गुण और कर्म का स्थान जन्म ने ले लिया। ऐसे में गुण और कर्म के आधार पर जो वर्ण परिवर्तन करना सम्भव था वह अब सम्भव नहीं रहा। इसीलिए आज समाज में वर्णों के स्थान पर हमें जातियां और उपजातियाँ देखने को मिलती हैं। भारतीय ऋषियों ने जो वर्ण भेद सामाजिक व्यवस्था को बनाए रखने के लिए किया था, जातियों और उपजातियों ने उसके वास्तविक स्वरूप को प्रभावित करते हुए अव्यवस्थित करने का कार्य किया है। लेकिन जिस वर्ण व्यवस्था की रचना ऋषियों ने एक सकारात्मक सोच को लेकर की थी भले ही उसका स्थान आज जन्म ने ले लिया हो फिर भी उसकी सार्थकता आज भी समाज में देखने को मिलती है। आधुनिक युग में शिक्षा और तकनीकी वर्ण व्यवस्था के वास्तविक उद्देश्य के रूप में व्यक्ति की प्रतिभा को विशेष महत्व देती है| इस प्रकार आज का समाज व्यक्ति की प्रतिभा अर्थात गुणों के अनुरूप कार्य करने अवसर प्रदान करते हुए विकाश की ओर अग्रसर हैं। अत: वर्ण व्यवस्था के महत्व पर विचार करते हुए निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है कि इस व्यवस्था ने मनुष्य को सदा प्रगति के पथ पर आगे बढ़ने के लिए प्रेरित करने का कार्य किया है।

संदर्भ:

1. डा. हरि सिंह, समाज दर्शन का परिचय, पृष्ठ-164
2. Senart, caste in India, Page - 113
3. Senart, caste in India, page - 128
4. Huttan, J. H. caste in India, page-64

5. गीता.. 4.13

6. डा. हरि सिंह, समाज दर्शन का परिचय, पृष्ठ-166

7. महाभारत, शान्ति पर्व, 72.3-4.

8. महाभारत, अनुशासन पर्व -143. 51

9. शुक्रनीति-1.38

10. मनुस्मृति-10.42.